हरि प्रसाद भुयन

बनाम

दुर्गा प्रसाद भुयन एवं अन्य

(सिविल अपील सं. 768/2008)

29 जनवरी, 2008

[डॉ. अरिजीत पासायत और डी. के. जैन, न्यायाधिपति]

परिसीमा अधिनियम, 1963 - अनुसूची अनुच्छेद 121 - उपशमन को अपास्त कर कानूनी उत्तराधिकारियों का प्रतिस्थापित करना - मांगने में देरी - निचली अदालत ने देरी को माफ नहीं किया - अपील पर अभिनिर्धारित कियाः देरी माफ किए जाने के लिए उत्तरदायी थी - परिसीमा की गणना मृत्यु की जानकारी की तिथि से की जाएगी - मामले के तथ्यों में उपशमन को अलग करके प्रतिस्थापन सीमित अवधि के भीतर थी-सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 - आदेश 22 नियम 9

पूर्ववर्तियों द्वारा दायर किया गया मुकदमा उच्च न्यायालय द्वारा अपील में अपीलार्थी के हित में डिक्री किया गया था। निष्पादन अदालत ने डिक्री तैयार करते समय, मुक़दमे में राहत जो घोषित की गई थी, को गलती से निर्धारित नहीं किया गया। ट्रायल कोर्ट द्वारा आदेश दिया कि

डिक्री में दावा में चाही गई सभी राहतों को शामिल किया जाना चाहिये था। इसके बाद तदनुसार आदेश जारी किया गया। उत्तरदाताओं में से एक-प्रतिवादी, वारा जब इस न्यायालय के समक्ष विचारण न्यायालय के आदेश और डिक्री पर सवाल उठाया गया निर्देश के अनुसार तैयार किया गया, न्यायालय ने अपीलार्थी को धारा 152 सी. पी. सी. डिक्री में उचित सुधार करने के लिए उच्च न्यायालय जाने की मंजूरी दी स्वतंत्रता। तदनुसार आवेदन अंतर्गत धारा 152 दायर किया गया था। इसके बाद, 26.6.2003 अपीलार्थी को प्रोसेस सर्वर की रिपोर्ट से प्रत्यर्थी संख्या 13 और 24 की मृत्यु के बारे में पता चलता है। दिनांक 2.8.2003 को अपीलार्थी द्वारा उपशमन, प्रतिस्थापन और विलम्ब की क्षमा को अपास्त किये जाने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया गया। उच्च न्यायालय ने धारा 152 के तहत आवेदन पर विचार करते हुए प्रत्यर्थी संख्या 13 और 24 की मृत्यु के कारण एवं देरी के कारण को देखते हुए डिक्री को शून्य घोषित किया गया। इसलिए वर्तमान अपील प्रस्तुत की गई है।

न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए,

यह प्रतिपादित किया कि - अपीलार्थी को तामील कुनिन्दा की रिपोर्ट से उत्तरदाता 13 और 24 की मृत्यु के बारे में पता चला। पूर्व में भी इस न्यायालय के समक्ष उत्तरदाताओं द्वारा अपनी मृत्यु के तथ्य को उजागर

नहीं किया गया था। चूंकि ऐसा नहीं किया गया है, इसलिए उत्तरदाता विलंबित से कोई लाभ के अधिकारी नहीं है। यह एक स्पष्ट मामला है जहाँ प्रतिस्थापन की मांग में देरी की क्षमा के लिए प्रार्थना उपशमन और विलम्ब की क्षमा को अलग करके उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिए था। [पैरा 6][167-सी, डी]

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील सं. 768/2008

गुवाहाटी उच्च न्यायालय के विविध मामला संख्या 58/2003 की द्वितीय अपील संख्या 58/2003 में अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 06.10.2005 से।

अपीलार्थी की ओर से - राणा मुखर्जी, अजीम एच. लस्कर, आनंद, डी. भरत कुमार और अभिजीत सेनगुप्ता।

डॉ. अरिजीत पासायत, न्यायाधीश द्वारा

1. अनुमति दी गई।

2. इस याचिका में गोवाहटी उच्च न्यायालय में एकल न्यायाधीश के उस आदेश को चुनौती दी गई है जिसके द्वारा उपशमन की याचिका, देरी को क्षमा किये जाने की याचिकाऐं, उपशमन को अपास्त किये जाने की याचिका व उत्तर संख्या 13 व 24 के उत्तराधिकारियो को प्रतिस्थापित करने

की याचिका को द्वितीय अपील संख्या 80/1986 द्वारा खारिज किया गया था। वहां यह आदेशित किया गया था कि अपील उपशमन हो चुकी है एवं उच्च न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील संख्या 80/1986 में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांकित 18.05.1995 शून्य है और इस प्रकार प्रार्थी अन्तर्गत धारा 152 सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 (संक्षेप में सीपीसी) चलने योग्य नहीं है।

3. संक्षेप में प्रकरण के तथ्य इस प्रकार हैं:

अपीलकर्ता के पूर्ववर्तियों ने सहायक जिला न्यायाधीश संख्या 1, गोवाहटी की अदालत में मुकदमा टीएस संख्या 26/1978 दायर किया। उक्त मुकदमा, अन्य बातों के अलावा, पुनः प्राप्त करन, कब्जे की पुष्टि और मुकदमे की संपत्तियों पर स्वामित्व की घोषणा और कुछ प्रतिवादियों के नामों के उत्परिवर्तन को रद्द करने के लिए था। अपीलकर्ता के अनुसार, उक्त मुकदमे में प्रत्येक प्रतिवादी के खिलाफ कार्रवाई का कारण विशेष रूप से निर्धारित किया गया था और मुकदमे में प्रार्थनाएं भी विशेष रूप से अनुसूचित संपत्तियों में कथित हिस्सेदारी के संबंध में प्रतिवादियों के खिलाफ निर्देशित की गई थीं। विचारण न्यायालय द्वारा अपने निर्णय दिनांकित 11.01.1984 से उक्त वादपत्र को खारिज किया गया। उक्त आदेश के विरूद्व जिला जज गोवाहटी के समक्ष अपील संख्या 5/1984 प्रस्तुत की गई जो भी जिला जज द्वारा 30.01.1986 को खारिज की गई। वादी द्वारा

द्वितीय अपील संख्या 80/86 गोवाहटी उच्च न्यायालय के समक्ष दायर की गई। उक्त द्वितीय अपील के लंबित रहते कुछ प्रतिवादियो की मृत्यु होने पर उनके विधिक उत्तराधिकारियों को प्रतिस्थापित किया गया। द्वितीय अपील जो कि वादिया द्वारा दायर की गई थी को गोवाहटी उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार दावा डिक्री किया गया। वादीगण द्वारा डिक्री के निष्पादन हेतु विचारण न्यायालय के समक्ष निष्पादन मुकदमा संख्या 4/1995 प्रस्तुत किया गया। विचारण न्यायालय द्वारा उच्च न्यायालय के निर्देश के अनुसार दिनांक 7.04.1996 को डिक्री दायर की गई परन्तु उक्त डिकी केवल लागत निर्धारित की जाकर बिना रसीदो को निर्धारित किये घोषित की गई। एक विशेष अनुमति याचिका (सी सी नम्बर 2275/1996) उत्तरदाता द्वारा निर्णय में आदेश दिनांकित 18.08.1995 जो कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित किया गया था को निम्न टिप्पणी के साथ खारिज किया गया। उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश दिनांक 18.8.1995 के खिलाफ उत्तरदाताओं द्वारा दायर एक एसएलपी (सीसी नंबर 2275/96) को निम्नलिखित टिप्पणियों के साथ दिनांक 8.5.1996 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था:

> "याचिकाकर्ताओ के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा यह जाहिर किया गया कि याचिका कर्ताओ को आदेश वापिस लिये जाने हेतु उच्च न्यायालय जाने की सलाह दी गई है एवं

उन्हें विशेष अनुमति याचिका को वापिस लिये जाने हेतु निर्देशित किया गया है। हम उक्त बयान जो कि विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है को अभिलेख पर लेते हुए यह विशेष अनुमति याचिका को वापिस लौटाने के आधार पर खारिज करते हैं।"

अपीलार्थीयों द्वारा प्रस्तुत निष्पादन याचिका में उत्तरदाता संख्या 7 के विधिक उत्तराधिकारियो द्वारा धारा 47 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत आपत्तियां प्रस्तुत की गई एवं विचारण न्यायालय द्वारा उक्त प्रार्थना पत्र को अन्य बातों के साथ निम्न टिप्पणी के साथ निस्तारित किया गया।

"उपरोक्त के अलावा मेरा विचार है कि डिक्री का निष्पादन अनुसूची ई के अनुसार नहीं किया जा सकता परन्तु अन्य सम्पत्तियों के सम्बन्ध में जो कि अनुसूची ई व अन्य मदयूनों के अलावा है की हद तक निष्पादित किया जा सकता है। इस आदेश के साथ याचिका निर्णीत की जाती है। डिक्री के निष्पादन हेतु कार्यवाही की जावे दिनांक 26.8.1997 को विचारण कोर्ट ने निष्पादन कार्यवाही में मुकदमे में दो अलग-अलग आदेशों द्वारा यह देखा कि डिक्री में दावा की गई सभी राहतें शामिल होनी चाहिए और तदनुसार आदेश दिया जाना चाहिए। 17.11.1997 को

आदेश दिनांक 26.8.1997 के अनुसार डिक्री तैयार की गई। प्रतिवादी संख्या 6 यानी लक्ष्मी राम भुइयां ने गोवाहाटी उच्च न्यायालय में दिनांक 26.8.1997 के आदेश और दिनांक 17.11.1997 की डिक्री पर सवाल उठाते हुए एक सिविल रिवीजन (सीआर संख्या 423/1997) दायर किया। दिनांक 29.9.1999 के आदेश द्वारा उच्च न्यायालय ने सिविल रिवीजन को खारिज कर दिया। 2000 के आरपी संख्या 6 में उच्च न्यायालय के दिनांक 29.9.1999 के आदेश की समीक्षा की मांग करते हुए एक याचिका दायर की गई थी। दिनांक 10.4.2001 के आदेश के खिलाफ एक विशेष अनुमति याचिका दायर की गई थी, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने समीक्षा याचिका को खारिज कर दिया था। 20.11.2002 को इस न्यायालय ने अपीलकर्ताओं को डिक्री में उचित सुधार करने के लिए धारा 152 सीपीसी के तहत उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने की स्वतंत्रता दी। निर्णय की सूचना दी गई है 2002 में इस न्यायालय ने अपीलकर्ताओं को डिक्री में उचित सुधार करने के लिए धारा 152 सीपीसी के तहत उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने की स्वतंत्रता दी। निर्णय की सूचना दी गई है 2002 में इस न्यायालय ने अपीलकर्ताओं को डिक्री में उचित सुधार करने के लिए धारा 152 सीपीसी के

तहत उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने की स्वतंत्रता दी। निर्णय की सूचना दी गई है लक्ष्मी राम भुइया बनाम हरी प्रसाद भुइया और अन्य (2003 (1) एससीसी 197)। इसे अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रकार नोट किया गया:

11. दायित्व न केवल विचारण न्यायालय पर, बल्कि अपीलीय अदालत पर भी डाला गया है। विचारण न्यायालय द्वारा मुकदमे का फैसला सुनाए जाने की स्थिति में, यदि अपीलीय अदालत विचारण न्यायालय के फैसले में हस्तक्षेप करती है, तो अपीलीय अदालत के फैसले में दी गई राहतों और किए गए संशोधनों, यदि कोई हो, को सटीक और विशेष रूप से निर्धारित किया जाना चाहिए। मूल डिक्री स्पष्ट रूप से और विशिष्टता और सटीकता के साथ। आदेश 41 नियम 31 सीपीसी अपीलीय निर्णय के लेखक पर निर्धारण के लिए बिंदु, उस पर निर्णय, निर्णय के कारण और जब अपील की गई डिक्री उलट या भिन्न होती है, तो अपीलकर्ता किस राहत का हकदार है, यह बताने का दायित्व डालता है। यदि मुकदमा विचारण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था और अपील में बर्खास्तगी का आदेश उलट दिया गया था, फैसले का प्रवर्ती भाग इतना सटीक और स्पष्ट होना चाहिए, जितना तब होता जब मुकदमा विचारण न्यायालय द्वारा डिक्री किया गया

होता ताकि उसके अनुरूप एक स्व-निहित डिक्री तैयार की जा सके। वादी, डोमिनस लिटस होने के कारण, अपनी इच्छानुसार राहत खंड को लागू करने में स्वतंत्र है और ऐसे मामले नहीं हैं जहां वादी उसे दी गई स्वतंत्रता का पूरा उपयोग करता है। यह अदालत का काम है कि वह मुकदमे पर फैसला सुनाते हुए राहतों की जांच करे और फिर फैसले के प्रवर्ती भाग का निर्माण इस तरह से करे कि दी गई राहतें विभिन्न मुद्दों पर आए निष्कर्षों और स्वीकृत तथ्यों के अनुरूप हों।

12. मौजूदा मामले में, वादी में प्रार्थना की गई राहतों को देखने से पता चलता है कि राहतें बहुत खुशी से नहीं दी गई हैं। कुछ राहतें ऐसी हैं जो प्रार्थना के बावजूद आवश्यक नहीं हो सकती हैं या अनावश्यक हो सकती हैं। राहतों को सटीक और विशिष्ट बनाने के लिए पुनर्गठित या पुनर्परिभाषित करने में सक्षम माना जा सकता है। हो सकता है कि न्यायालय कुछ अन्य राहत देने के लिए इच्छुक हो ताकि विवाद पर प्रभावी ढंग से निर्णय लिया जा सके और इसे समाप्त किया जा सके। अपीलीय निर्णय में कुछ भी स्पष्ट नहीं किया गया है। विचारण न्यायालय, जिस पर डिक्री तैयार करने के लिए दूसरे अपीलीय फैसले द्वारा दायित्व डाला गया था, वह भी, जैसा कि उसके आदेश से पता चलता है, उसके

दिमाग में बहुत स्पष्ट नहीं था और इस धारणा पर आगे बढ़ना सुरक्षित समझा कि सभी राहतें मांगी गईं वाद में वादीगण को अनुमति दी गई। दूसरी अपील की अनुमति देने वाले विद्वान एकल न्यायाधीश को स्पष्ट रूप से बताना चाहिए था कि अपीलीय फैसले के दौरान आए निष्कर्षों के अनुसार वादी किस हद तक व किस प्रकार हकदार पाए गए थे। पक्षों, डिक्री का मसौदा तैयार करने वाले शक्स व डिक्री का निष्पादन करने वाले न्यायालय को यह अनुमान लगाने से नहीं छोड़ा जा सकता है कि मुकदमे पर डिक्री देने वाले या अपील की अनुमति देने वाले न्यायाधीश के दिमाग में क्या चल रहा था, उन राहतों को रिकॉर्ड पर रखे बिना, जिनके लिए वादी को राय में हकदार माना जाता है।

13. यहां एक और कमी है। सामान्यतः डिक्री उच्च न्यायालय द्वारा ही तैयार की जानी चाहिए थी। किसी भी पक्ष के विद्वान वकील द्वारा इस न्यायालय के ध्यान में यह बात नहीं लाई गई है कि क्या उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए कोई नियम हैं, जो विचारण न्यायालय को फैसले के अनुरूप डिक्री तैयार करने का निर्देश देने जैसी प्रथा का समर्थन करते हैं।

14. इस समस्या का समाधान किस प्रकार किया जावे हमारी राय में, सफल पक्ष के पास धारा 152 सीपीसी का सहारा लेने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं है जो निर्णयों, डिक्री या आदेशों में लिपिकीय या अंकगणितीय गलतियों या किसी आकस्मिक चूक या चूक से उत्पन्न होने वाली त्रुटियों को या तो स्वप्रेरणा से या किसी पक्ष के आवेदन पर अदालत द्वारा किसी भी समय ठीक करने का प्रावधान करता है। उच्च न्यायालय के फैसले को पढ़ने से पता चलता है कि उसकी राय में वादी मुकदमे में सफल होने के हकदार पाए गए। मुकदमे में सफल होने की स्थिति में वादी जिन राहतों के हकदार थे, उन्हें शामिल करके अदालत के इरादे को प्रकट करने में एक आकस्मिक चूक या चूक हुई है। धारा 152 अदालत को अपने फैसले को बदलने में सक्षम बनाती है ताकि उसके अर्थ और इरादे को प्रभावी बनाया जा सके। न्यायालय की अपने आदेशों में संशोधन करने की शक्ति ताकि उस इरादे को पूरा किया जा सके और उस समय न्यायालय के अर्थ को व्यक्त किया जा सके जब आदेश दिया गया था, एल जे भोवन द्वारा स्वाडर क्री मैनोर बनाम स्वाडर में यह अभिनिर्धारित किया है कि न्यायालय अपने आदेशों में जाहिर किये गये मन्तव्य व उल्लेखित किये गये अर्थ के क्रियान्वन हेतु संशोधित

कर सकता है व उक्त संशोधन मात्र इस हद तक किया जाचेगा कि ऐसे संशोधन से किसी प्रकार का कोई अन्याय कारित न हो। लिंडले, एलजे ने देखा कि यदि अदालत का आदेश, तैयार होने के बावजूद, उस आदेश को व्यक्त नहीं करता जैसा कि दिया जाना था, तो आदेश पारित करने और दर्ज करने में ऐसा कोई जादू नहीं है जो अदालत को अपने स्वयं के रिकॉर्ड बनाने के अधिकार क्षेत्र से वंचित कर दे। सच है, और यदि पारित और दर्ज किया गया कोई आदेश अदालत के वास्तविक आदेश को व्यक्त नहीं करता है, तो, जैसा कि मुझे लगता है, यह कहना चौंकाने वाला होगा कि पीड़ित पक्ष रिकॉर्ड को सही कराने के लिए यहां नहीं आ सकता है, लेकिन उसे जाना होगा अपील के माध्यम से हाउस ऑफ लॉर्ड्स में।"

15. उपरोक्त कारणों से अपील स्वीकार की जाती है। डिक्री तैयार करने वाले विचारण न्यायालय के आदेश को रद्द किया जाता है। पार्टियों को सीपीसी की धारा 152 के तहत उच्च न्यायालय के फैसले में उचित सुधार की मांग के लिए उच्च न्यायालय में जाने की स्वतंत्रता है, ताकि फैसले में व्यक्त इरादे के अनुरूपराहत की सीमा और तरीके को स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट किया जा सके जिसके लिए उच्च न्यायालय की राय में सफल पक्ष को हकदार पाया

गया था।। जो देरी होगी उसके लिए खेद व्यक्त करना होगा लेकिन यह अपरिहार्य है। एक बार जब निर्णय का प्रवर्ती भाग ठीक हो जाता है तो निर्णय के प्रवर्ती भाग के अनुरूप उच्च न्यायालय द्वारा डिक्री तैयार करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। यदि उच्च न्यायालय के नियमों के द्वारा डिक्री को तैयार किये जाने में लिपिकीय कार्य विचारण न्यायालय से करवाया जाना आवश्यक है तो उसे विचारण न्यायालय से करवाये जाने हेतु छोडा जा सकता है।

4. इस प्रकार उच्च न्यायालय के समक्ष धारा 152 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत प्रार्थना पत्र पेश किया गया। दिनांक 26.06.2003 को अपीलार्थी द्वारा यह प्रकट किया गया कि उसे प्रथम बार उत्तरदाता संख्या 13 व 14 की मृत्यु की सूचना क्रमशः फरवरी 1999 व 1993 को प्राप्त हुई थी। उक्त सूचना अपीलार्थी को तामील कुनिन्दा की रिपोर्ट दिनांकित 26.06.2003 के माध्यम से हुई थी। दिनांक 02.08.2003 को अपीलार्थी द्वारा उपसमन के आदेश को अपास्त किये जाने व प्रतिस्थापना व विलम्ब को शमन किये जाने हेतु आवेदन किया गया। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा धारा 152 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रार्थना पत्र पर आदेश पारित करते हुए डिक्री को उत्तरदाता संख्या 13 व 14 की मृत्यु के आधार पर व

उनके विधिक वारिसान को देरी से रिकार्ड पर लेने के आधार पर शून्य घोषित किया गया था।

5. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह जाहिर किया कि उच्च न्यायालय द्वारा विभिन्न आवश्यक प्रासंगिक को अपने आदेश में नजरअंदाज कर दिया गया है। जैसा कि प्रथमतः यद्यपि मृतक जो कि लक्ष्मी राम भूयन का निर्णय था जिसमें उत्तरदाता संख्या 13 व 14 की मृत्यु के सम्बन्ध में कोई उल्लेख नहीं किया गया। वर्तमान उत्तरदाता जो कि इस न्यायालय के समक्ष पूर्व अपील में अपीलार्थी था, उनके द्वारा भी मृत्यु बाबत कोई उल्लेख नहीं किया गया। इस न्यायालय के निर्णय के अनुरूप किसी भी डिक्री को तैयार नहीं किया गया।

6. इस विषय में कोई विवाद नहीं है, कि अपीलार्थी को उत्तरदाता संख्या 13 व 14 की मृत्यु की सूचना तामील कुनिन्दा की रिपोर्ट से हुई। इससे पूर्व भी उत्तरदाता द्वारा उनकी मृत्यु हो जाने के तथ्य को इस न्यायालय के समक्ष जिक्र नहीं किया गया। चूंकि ऐसा नहीं किया गया है, इसलिए उत्तरदाता अपीलकर्ता के विलंबित दृष्टिकोण से कोई लाभ नहीं उठा सकते हैं। हमारे अनुसार यह एक स्पष्ट मामला है जहां प्रतिस्थापन की मांग में देरी को माफ करने और विलंब को माफ करने की प्रार्थना को उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिए था। उच्च न्यायालय का

आदेश खारिज किया जाता है। अपील स्वीकार की जाती है। लागत के रूप में कोई ऑर्डर नहीं होगा।

के.के.टी.

अपील की अनुमति दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल **'सुवास'** की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अंशुमान सिंह खंगारोत (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।